International Journal of Applied Research 2021; 7(4): 377-381

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(4): 377-381
www.allresearchjournal.com
Received: 13-02-2021
Accepted: 19-03-2021

डॉ. नीरव अडालजा
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, डॉ. भीम राव अम्बेडकर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
डॉ. नीरव अडालजा
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, डॉ. भीम राव अम्बेडकर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

भारतीय समाज में स्त्री की यातना, संघर्ष और विद्रोह के आयाम 'छिन्नमस्ता' प्रभा खेतान

डॉ. नीरव अडालजा

प्रस्तावना

'छिन्नमस्ता' उपन्यास में दो उच्चवर्गीय परिवारों की कथा है। वास्तव में यह उपन्यास की नायिका प्रिया की कथा है, जिसके कारण उसके मायके एवं सुसराल दोनों परिवारों की कथा इसके कथानक का हिस्सा बन गई है। प्रिया की यातना, संघर्ष व विद्रोह के आयाम इन दोनों परिवारों से जुड़े हैं। पहला परिवार जूट व्यवसायी मारवाड़ी व्यापारी सांवरमल का है, जो चौथी पास होकर भी फ़र्राटेदार अंग्रेजी बोलते हैं और अपने कारोबार में सफल हैं। प्रिया इसी गुप्ता परिवार के छह बच्चों में से सबसे छोटी व आखिरी संतान है। कलकत्ता के पॉश इलाके की एक बड़ी कोठी में रहने वाली प्रिया के यहां नौकर–चाकर हैं, सुख–सुविधाएं हैं और हैं–हीरों से सजी–धजी मामियां, मां और रईस खानदान में ब्याही सल्लो दीदी उर्फ़ सरोज। पर दुखद स्थिति यह है कि इस सुख–सुविधा सम्पन्न परिवार में भी स्त्रियां पीड़ा, उपेक्षा, अपमान एवं यातना का शिकार होती हैं और इस कुचक्र की सबसे बड़ी शिकार है प्रिया, जो पैदा होने से लेकर सुसराल जाने तक इस घर में यातना सहती है। कथानक का उत्तरार्द्ध प्रिया के सुसराल अर्थात अग्रवाल हाउस से जुड़ा है, जहां प्रिया बहू बनकर जाती है। सुखद भविष्य एवं सुरक्षित व प्रेममय जीवन की कामना से अग्रवाल हाउस में ब्याही प्रिया के जीवन में विवाह के बाद यातना व संघर्ष का एक नया अध्याय जुड़ जाता है, जिसकी इति श्री प्रिया के घर त्यागने, विद्रोहिणी होने व मुक्ति की राह चुनने के फलस्वरूप होती है। प्रिया के चरित्र के माध्यम से इस उपन्यास में भारतीय समाज में स्त्री की पीड़ा को बार–बार उजागर किया गया है। स्त्री पीड़ा की अभिव्यक्तियां कहीं स्मृतियों के में प्रिया के मस्तिष्क में उभरती हैं तो कहीं व वक्तव्यों के रूप में हैं, जो लेखकीय हस्तक्षेप को प्रकट करते हैं। जैसे

1. ''छोटी मां अपनी कहानी सुनाती जा रही थी। औरत के जीवन को ज़रा सा खुरचो, दर्द, पीड़ा और त्रासदी के बहते हुए दरिया मिलेंगे। [1] '' (पृष्ठ 144)
2. ''औरत कहां नहीं रोती? सड़क पर झाड़ू लगाते हुए, खेतों में काम करते हुए, एयरपोर्ट पर बाथरूम साफ करते हुए या फिर सारे भोग–ऐश्वर्य के बावजूद मेरी सास जी की तरह पलंग पर रात–रात भर अकेले करवटें बदलते हुए हाड़–मांस की बनी ये औरतें... अपने अपने तरीके से जिदंगी जीने की कोशिश में छटपटाती ये औरतें हज़ारों सालों से इनके आंसू बहते आ रहे हैं।''[2] (पृ. 221)

प्रिया अकेली है। उसका अकेलापन कारुणिक नहीं है। वह सहानुभूति की मांग नहीं करती, वरन् यह उसके वरण स्वातंत्र्य का प्रतिफल है, उसका अर्जित चैतन्य है। वह मन ही मन कहती है–''मेरे साथ मेरा अकेलापन है, पर यह अकेलापन मुझे जीवन का अर्थ समझा रहा है, कैसे मैंने अपने आप को बचाया है, अपने मूल्यों को जीवन में संजोया है, हां! टूटी हूँ! बार–बार टूटी हूँ...पर कहीं तो चोट के निशान नहीं... दुनिया के पैरों तले रौंदी गई, पर मैं मिट्टी के लौंदे में परिवर्तित नहीं हो पाई हूँ।''[3] इस अकेलेपन को उसने चुना है। इसलिए चुना है कि मां, भाई–बहन, पति पुत्र इत्यादि सभी रिश्ते उसने छिन्न–भिन्न डाले हैं। वह इसलिए अकेली है कि जिन मानवीय संबंधों को वह सराह नहीं पाई, उन्हें उसने तिलांजलि दे दी। जिन संबंधों ने उसके अस्तित्व को कैद करना चाहा, कुचलना चाहा उन्हें उसने स्वयं ही क्षत–विक्षत कर फेंक दिया। रिश्तों के इस चुनाव के पीछे प्रिया की क्या सोच है? एक वाक्य में कहा जाए तो वह कदापि 'औरत' नहीं बनना चाहती। 'औरत' यानि 'मर्द' का प्रतिलोम 'मर्द' यानि वर्चस्वी नर और 'औरत' यानि कुचले जाने को अभिशप्त मादा संबंधों का यह क्षरण और उनके त्याग की ये दुखद स्मृतियां प्रिया के मुक्ति प्रसंग का प्रमाण हैं।

प्रभा खेतान का उपन्यास 'छिन्नमस्ता' स्त्री विमर्श के कई आयाम उद्घाटित करता है। इसका एक आयाम है''औरत आज भी मूक है''[4] (पृष्ठ 23)। औरत के मौन रह जाने, सब कुछ चुपचाप सह जाने का नाम ही तो प्रिया का अतीत है। इस अतीत में उसकी नितान्त अबोधता में बड़े भाई द्वारा उसके साथ बार–बार डरा–धमकाकर किया गया देह भोग, प्राध्यापक द्वारा किया गया दैहिक शोषण, कॉलेज के गुण्डों द्वारा उसके साथ किया गया निर्लज्ज व्यवहार, पति द्वारा सुहागरात के दिन से ही क्रूरता के साथ किया गए पशुवत रतिकर्म की क्षोभकारी यादें हैं। इसके अतिरिक्त उसकी मां द्वारा प्रिया की बचपन से ही की गई उपेक्षा, भाई–बहनों द्वारा बालपन में उपेक्षित व अपमानित होने की अनेक घटनाएं, ससुर की दूसरी पत्नी की संतान नीना की त्रासदी तथा पति द्वारा निरन्तरित अपमान व अन्य वंचनाएं सुरक्षित खरोंचों सी हैं, जिसमें रह–रहकर दर्द उठता है। इन खरोंचों ने यदि उसे आत्महीनता दी तो उसे आक्रामक भी बनाया। उसमें प्रतिरोध की प्रचण्ड ज्वाला पैदा की और उसमें एक निहायत स्वतंत्र अस्तित्व प्राप्त करने की कामना भी पैदा की।

उपन्यास के आरम्भ में लेखिका ने प्रतिष्ठित अग्रवाल घराने की बहू, अड़तीस वर्षीय प्रिया को शिकागो से एक चमड़े की प्रदर्शनी से लौटते दिखाया है। प्रिया का लैदर एक्सपोर्ट का बिजनेस है। यह बिजनेस उसने अपने अर्थहीन जीवन को एक दिशा देने व अपने अस्तित्व की पहचान के लिए अपने पति नरेन्द्र की स्वीकृति से ही शुरू किया था। जैसे–जैसे प्रिया का काम बढ़ता गया, प्रिया की व्यस्तताएं भी बढ़ती गईं। बढ़ती गईं उसकी विदेश यात्राएं, पराए पुरुषों से बिजनेस के सिलसिले में मिलना, धन–अर्जन और सफलता। इन सारी गतिविधियों में उभरती गई प्रिया की प्रतिभा, कार्य कुशलता, व्यावसायिक बुद्धि, साहस, स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता और आर्थिक स्वतंत्रता। यह स्थिति एक स्वतंत्र व्यक्तित्व वाली सजग स्त्री के लिए जितनी अर्थवान व महत्त्वपूर्ण है, उसके पति, स्वामी, मालिक व पुरुष के लिए उतनी ही व्यर्थ एवं बेचैन करने वाली। राजेन्द्र यादव ने एक साक्षात्कार में स्त्री के संबंध में चर्चा करते हुए स्त्री के प्रति पुरुष की मानसिकता के संबंध में लिखा है–''जब तक वह (स्त्री) मेरी सम्पति है, तभी तक वह मेरी प्रिय है, जैसे ही वह मुझसे छूटकर स्वतंत्र होकर खड़ी होती है, वह मेरी सत्ता को चुनौती देती है। मेरी सत्ता से छूटी स्त्री मेरे लिए चुनौती है, दुश्मन है।'' [5] यह एक दुखद स्थिति है। नरेन्द्र का व्यक्तित्व इसी सोच से संचालित है। पितृसत्तात्मक समाज में प्रिया जैसी स्त्री की राह में कांटे ही कांटे हैं। प्रिया की राह में सबसे अधिक कांटे विछाने वाला उसका पति नरेन्द्र है। नरेन्द्र के लिए प्रिया सभा सोसायटी में सजधज कर आभूषणों से लदी सजी संवरी, प्रतिष्ठा बढ़ाने वाली वस्तु से बढ़कर कुछ नहीं। अपने उच्च व्यवसायी वर्ग में प्रिया को लोगों से मिलवाना उसके लिए फक्र की बात है क्यों कि इससे उसकी अपनी प्रतिष्ठा बढ़ती है, लेकिन वास्तविक जीवन में नरेन्द्र प्रिया को यौनेच्छा पूर्ति का साधन मात्र मानता है। वह आए दिन उससे झगड़ता है, उसके व्यवसाय के सिलसिले में बाहर आने जाने पर प्रतिबंध लगाता है। लेखिका प्रिया की पीड़ादायी स्मृतियों के माध्यम से कथानक को परत दर परत पाठकों के सामने खोलती जाती है। प्रिया अपने दुखद अतीत को जितना भुलाना चाहती है, स्मृतियां उतनी ही तीव्रता से उसे अपने जाल में घसीट लेती हैं। सम्पूर्ण उपन्यास स्मृतियों में बुना हुआ है। प्रिया इन स्मृतियों की दारुणता को भूल नहीं पाती। वह दमन और यातना के दायरे के बाहर निकल जाने के वर्षों बाद भी महसूस करती है कि–''एक अतीत है जो आज भी वर्तमान के साथ घिसट रहा है''।[6] जहां उसे अपना उपेक्षित, अपमानित तथा यौन–शोषित बचपन व उत्तरोतर में अपमान, तिरस्कार व मानसिक प्रताड़ना से परिपूर्ण विवाहित जीवन बार–बार याद आता है। लेखिका ने इन स्मृतियों के डूबते और टूटते कथा–सूत्र को, सरसता जहाँ उस और पठनीयता देने के लिए, विभिन्न प्रकरणों को आरम्भ में दड़ी कुशलता से इस्तेमाल किया है। ये स्मृतियां, अतएव टेकनीक का हिस्सा भी बन गई हैं और पीड़ा को प्रगट करने वाली दास्तान भी।

प्रिया की ये तमाम स्मृतियां 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में अभिव्यक्त नारी संसार की यातना, संघर्ष व विदोह का मार्मिक लेखा जोखा प्रस्तुत करती हैं तथा कथानक को विकास देती हैं। फ़िलिप की पत्नी जूडी के अलावा 'छिन्नमस्ता' के प्रायः सभी नारी पात्र अपनी–अपनी जीवन परिस्थितियों में किसी न किसी वजह से यातना व पीड़ा झेलते हैं। परिस्थितियां उन्हें संघर्ष के लिए प्रेरित करती हैं। फलस्वरूप उनका समर्पण अततः एक विद्रोह का रूप धारण कर लेता है और वे 'छिन्नमस्ता' स्वरूप अपने अधिकारों की रक्षा एवं अपने अस्तित्व के लिए आक्रामक हो उठती हैं, जबकि उपन्यास में ऐसे नारी पात्रों की सृष्टि भी की गई है जो यातना सहते हुए भी अपने दबे हुए व्यक्तित्व व सामाजिक दबावों के कारण मुक्ति की आकांक्षा से बिल्कुल अछूते हैं। 'छिन्नमस्ता' की नायिका प्रिया एवं कुछ अन्य नारी पात्रों का विद्रोह न केवल चौकाने वाला है, बल्कि समझौता न किए जाने की स्थिति में परिवर्तन की मांग करता है और परिवर्तन लाकर अपनी शक्ति व सामर्थ्य को प्रमाणित करता है।

इस उपन्यास में स्त्री ही स्त्री की यातना का कारण बनती है। परिवार में कैसे स्त्री एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी की स्त्री को मानसिक यातना देती है। यह स्त्री की परपीड़क प्रवृत्ति और उसकी कुंठाओं का परिचायक है।

प्रिया 'छिन्नमस्ता' उपन्यास की नायिका है। इस उपन्यास का अधिकांश स्त्रीवाद उसकी के चरित्र के इर्द–गिर्द रचा गया है। स्त्री की संचित पीड़ा उसी के माध्यम से वाणी पाती है, उसी के चरित्र से मर्दवाद का प्रतिरोध होता है, उसी के द्वारा यह अभिव्यक्ति मिलती है कि स्त्री होने का अर्थ गुलामी है। वही संकल्प लेती है कि वह 'स्त्री' बनी रहेगी, औरत कभी नहीं बनेगी। वही अपने अधिकारों की मांग करती है, वही प्यार के स्थायित्व को नकारती है और मृत संबंधों को ढोने के इनकार करती है, वही पुरुष के द्वारा देह की भूख मिटाने के लिए बहशीपन पर उतर आने का रहस्य खोलती है, वही स्त्री के दमन को अस्वीकार करती है, वही पितृसत्तात्मक कानूनों और ज्ञानानुशासनों पर प्रश्नचिन्ह लगाती हैं, पुरुष पशुता को देखकर वही पुरुष को अनावश्यक घोषित करती है। वही है, जो की स्त्री की देह पर केवल स्त्री के स्वतंत्र अधिकार की वकालत करती है तथा इसी आधार पर विवाहेतर यौन सम्बन्धों को नकारती नहीं तथा अपने ससुर की अवैध संतान को भी स्नेह, करुणा और मानवीय संवेदना प्रदान करती है। यह प्रिया ही है, जो पुरुष और स्त्री में भेदभाव रखने वाले सामाजिक पारिवारिक उस व्यवहार का विरोध करती है, जो बालक के जन्म पर खुशी मनाता हैं, तथा पुत्री के जन्म पर उदासी और चिंता प्रकट करता है। उसी का चरित्र है जो मनुष्य के आर्थिक संसाधनों तथा उपक्रमों के एकाधिकार को चुनौती देता है तथा व्यापार ही नहीं विदेशी व्यापार एवं निर्यात में भी पुरुष के क्षेत्र में प्रवेश कर के नारी के आर्थिक स्वावलम्बन को उसकी मुक्तिमार्ग के रूप में स्थापित करता है।

प्रिया की विद्रोही प्रवृत्ति के मूल में उसके अतीत में घटी पीड़ादायी घटनाओं का लम्बा इतिहास है। प्रिया को बचपन से ही अपनी मां के घर उपेक्षा व अपमान सहना पड़ता है। परिवार के सदस्यों ने ही उसके 'आत्म' को विकसित न होने दिया। मां का अपने प्रति दुर्व्यवहार व बाकी भाई बहनों के प्रति प्यार प्रिया को विशेष रूप से कचोटता है। यहां तक कि कॉलेज के दिनों तक उसकी मां उसकी तुलना में हर बात में उसकी बड़ी बहन सरोज को प्राथमिकता देती है। प्रिया मां की तुलना में दाई के सान्निध्य में प्रेम व सुरक्षा महसूस करती है। वह मां से डरती है और उनसे एक परायापन सा महसूस करती है।

कस्तूरी यानी प्रिया की मां ने अपनी बेटी प्रिया के लिए जो संबोधन गढ़ा है, वह है–मरणजोगी। इस संबोधन का प्रयोग पूरे उपन्यास में उसके लिए कई बार किया गया है। भाटा, पत्थर, बोकी, गधी, भंगन आदि अन्य उपाधियों वाली प्रिया को अनेक तरीकों से दबाया और कुचला गया है। आंख खोलते ही मां की उपेक्षा, वह भी इस कारण कि वह लड़की है। दूसरे, बड़े भैया के द्वारा बारम्बार बलात्कार।

प्रभा खेतान ने स्त्रीवादी दृष्टि से प्रिया की चरित्र सृष्टि में दाम्पत्य संबंधों के आयाम में भी स्त्री के उत्पीड़न और उसे अधिकारों से वंचित रखने के लिए पारिवारिक–सामाजिक यथार्थ को भी उद्घाटित किया है।

दाम्पत्य–संबंधों में ही समर्पण का भाव भी विकसित होता है और पति या पुरुष के प्रति घृणा का भाव भी। घृणा के भाव के जन्म के लिए जो कारण सर्वाधिक उत्तरदायी होता है। वह है–दाम्पत्येतर यौन–संबंध। स्त्री पर पुरुष के द्वारा कठोर नियंत्रण तथा उसके अधिकारों और उसकी मांगों का दमन भी इसका कारण होता है। ये सभी कारण इस उपन्यास में प्रसंगवश चित्रित हुए हैं। दाम्पत्येतर यौन–संबंधों के चित्रण के कई प्रसंग उपन्यास में है, जिनका उद्घाटन प्रिया की स्मृतियों के माध्यम से हुआ है। बड़े भैया के द्वारा प्रिया का यौन उत्पीड़न, असीम के द्वारा प्रिया की देह का भोग (120–121), प्रिया के ससुर की रखेल सास तिलोचमा की कथा (पृ.142–142) ऐसे प्रसंग हैं। रेखा कस्तवार के अनुसार–''स्त्री यदि असाधारण व्यवसायों के प्रति आकृष्ट हो (जो परम्परागत रूप पुरुष व्यवसाय के क्षेत्र से रहे हैं) तो उनका संघर्ष बढ़ जाता है। अधीनस्थ ही भूमिका वाले कार्य स्त्री सदियों से कर रही है, कभी मूल्य लेकर, कभी मुफ़्त में। स्त्री की इस स्थिति से व्यवस्था में गड़बड़ी नहीं होती, अंतः समाज द्वारा स्वीकार्य रही है। किंतु जब स्त्री स्वयं का व्यवसाय करना चाहती है, अपना पैसा बनाना चाहती है, पूंजी की बनी बनाई व्यवस्था को तोड़ती है– प्रश्न खड़े करती है। प्रिया ने जब अपने लिए पैसा कमाना चाहा, सजा उसके हिस्से आनी ही थी। उसे दो में से एक को चुनने का विकल्प मिला–परिवार और व्यवसाय। और प्रिया ने व्यवसाय चुना। स्त्री को 'महत्त्वाकांक्षी होने के' अपराध की सज़ा मिलती है।''[7] प्रिया को भी इसी अपराध की सजा मिलती है। नरेन्द्र के लिए प्रिया का अग्रवाल हाउस की 'बहू' और उसकी 'पत्नी' होना ही प्रिया की 'आईडेंटिटी' है। वह कभी प्रिया को पैसा कमाने की हवस का हवाला देता है, तो कभी उस पर पराए पुरुषों के साथ मौज मस्ती करने का इल्ज़ाम लगाता है। कभी उसे घर की चारदीवारी में बांधना चाहता है तो कभी प्रिया के स्वतंत्र व्यक्तित्व के लिए स्वयं को ज़िम्मेदार मानता है।

नरेन्द्र कभी प्रिया को घर से बाहर निकालने की धमकी देता है, तो कभी उसके मन में तलाक का ख़ौफ़ पैदा करता है। चूंकि वह पुरुष है, इसलिए घर में उसकी मर्जी चलेगी अर्थात् प्रिया को जो कुछ भी करना है, वह नरेन्द्र की मर्जी पर निर्भर करता है। यहाँ समस्या अपनी स्त्री या पत्नी को 'पोजैस्स' करने की या उस पर एकाधिकार पाने ही नहीं है, बल्कि इसका कारण एक पुरुष के लिए उसकी पत्नी या उस स्त्री का चुनौती बनना है, जो कुछ बरस पहले तक पूरी तरह उस निर्भर थी। स्वयं पर स्त्री की निर्भरता समाप्त होते ही पुरुष स्वयं को महत्त्वहीन समझने के कारण कुंठा से भर जाता है। वह अपने समकक्ष या अपनी तुलना में अधिक सफल व प्रतिष्ठित स्त्री की सफल छवि से आतांकित महसूस करता है और ईर्ष्या की भावना से प्रेरित होकर स्त्री से वह सब छीन लेना चाहता है, जिसकी वजह से स्त्री खुश है। प्रिया दिन–रात परिश्रम कर अपना व्यवसाय देश–विदेश में फैलाने में सफल होती है। देश–विदेश में आयोजित व्यावसायिक प्रदर्शनियों में भाग लेती है। विदेशी ग्राहकों से अच्छा ऑर्डर मिलने पर खूब धन अर्जित करती है तथा अपने बलबूते पर समाज में सफलता व प्रतिष्ठा पाती है। वह भारत सरकार द्वारा अपने प्रतिष्ठित व्यवसाय के लिए 'प्रथम पुरुस्कार' पाने का गौरव हासिल करती है। अरविंद जैन के अनुसार–''शायद पहली बार हिंदी, उपन्यास की नायिका परिवार, पूंजी और परंपरा की चौखट लांघ देशी–विदेशी सभी सीमाओं के उस पार तक 'स्त्री' के पक्ष में वकालत के साथ–साथ एक बौद्धिक विमर्श का जोखिम भी उठाती है।''[8] राजेन्द्र यादव के शब्दों में–''प्रतिभा और अस्मिता से लैस प्रिया पहली नारी है, जो सामाजिक चुनौतियों की तरह उभरती है।''[9]

प्रिया की प्रतिभा एवं अस्मिता से कुंठित नरेन्द्र जब प्रिया के व्यापार के प्रति लगाव को पागलपन तथा उन्माद का नाम देता है तो प्रिया उससे प्रतिवाद करती है–''क्या महत्त्वाकांक्षी होना अपराध है? क्या तुम रुपया नहीं कमाते?''[10] नरेन्द्र के मन में व्याप्त ईर्ष्या का भाव ही उसे प्रिया की गतिविधियों पर रोक लगाने के लिए प्रेरित करता है। क्या हमारा समाज किसी ईर्ष्यालु स्त्री को अपने पति के सफल कैरियर या व्यवसाय के मामले में रोक–टोक लगाने की इजाजत देता है? व्यवसायी महिला प्रिया के माध्यम से उपन्यास लेखिका ने अर्थ शक्ति के माध्यम से अपनी ताकत व हैसियत बढ़ाती, अपनी पहचान बनाती स्त्री को पुरुष के सम्मुख एक ऐसी चुनौती के रूप में उभारा है, जो पितृसत्तात्मक पोषित संस्कारों में पले–बड़े पुरुष को विचलित करती है और उसे स्त्री की सत्ता कुचलने के लिए उकसाती है।

स्त्री भले ही आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो जाए परिवार में आज भी उसके अवदान को महत्त्व नहीं दिया जाता। पुरुष ही आर्थिक निर्भरता से मुक्त होने के बावजूद समाज स्त्री को स्वतंत्र निर्णय लेने व उसे अपनी इच्छानुसार जीने की स्वतंत्रता नहीं देता। पीढ़ियों से स्त्री की जो कमजोर छवि बनी हुई है, स्त्री की वास्तविक लड़ाई उस छवि से उभरने की है। प्रिया यह बात अच्छी तरह समझती है। उसने अपने घर में स्त्री को घुटते, यातना सहते व पुरुष से प्रताड़ित होते देखा है। प्रिया की छटपटाहट नरेन्द्र से मुक्त होने की नहीं अपितु स्त्री के अस्तित्व को पंगु बनाने वाले या सामाजिक संस्कारों व परम्परा से मुक्ति की छटपटाहट है। आर्थिक स्वतंत्रता व सफल कैरियर उसमें आत्मविश्वास व आत्मसम्मान जाग्रत कर उसके व्यक्तित्व को सशक्त बनाती है, परंतु वह अपने भीतर यातना सहती दस बरस की लड़की की परछाई से मुक्त होना चाहती है। वह परम्परा में मिली अपनी रंगों में दौड़ रही शिथिलता से छुटकारा पाना चाहती है। स्त्री होने की वजह से संस्कार में मिली, स्वयं पीड़ा सहकर भी दूसरों के लिए उत्सर्ग करने की भावना से मुक्ति पाना चाहती है। प्रिया का विद्रोह परम्परा से मुक्ति की तलाश है– ''अम्मा! तुम्हारे जैसी, जीजी लोगों जैसी जिंदगी मैं नहीं स्वीकारना चाहती। मैं भी भाभी जी की तरह घुट–घुट कर नहीं मरना चाहती।'' [11] प्रभा खेतान ने स्वयं अपने जीवन से और 'छिन्नमस्ता' की नायिका प्रिया ने भी अपने जीवन के घटनाचक्र से नारी के दमन की स्थितियों को बहुत ही नज़दीक से देखा और समझा। इस भोगे हुए सत्य से उन्हें जो मुक्ति का बोध प्राप्त हुआ, उसके दो सूत्र है। पहला सूत्र है अन्याय, अत्याचार का अस्वीकार और दूसरा सूत्र हैं – अपने स्वतंत्र अस्तित्व की तलाश। इस अस्तित्व की तलाश, उसके मुक्तिमार्ग की पहचान, उसकी अपनी संपत्ति की मांग और व्यापार के माध्यम से आर्थिक सुरक्षा तथा स्वावलंबन में की जा सकती है। प्रिया ने अस्तित्व की तलाश की प्रक्रिया में जो महत्त्वपूर्ण बोध प्राप्त किया है, वह है 'स्त्री' और 'औरत' में भेद की पहचान और उसने 'औरत' होने से दृढ़ता से पूरे उपन्यास में कई बार इन्कार कर दिया है।

1. ''मैंने मन ही मन निश्चय कर लिया था कि मुझे लड़की ही बने रहना है, औरत नहीं बनना।'' (पृ.85)[12]
2. नरेन्द्र। मैं पैसों के लिए काम नहीं कर रही।

फिर किस लिए काम कर रही हो? सुबह से रात तक फिरकी की तरह नाचती हो, किसलिए? हां, बोलो, जवाब दो?

''अपनी आइडेंटिटी, व्यक्तित्व के विकास के लिए'' (पृ. 215) [13]

स्त्री और औरत का यह भेद परतंत्र और विवश स्त्री तथा स्वतंत्र और स्वावलम्बी का भेद है। यह भेद है अधिकार–वंचिता तथा साधिकार अस्तित्व वाली स्त्री का प्रभा खेतान ने स्त्रीवाद में उसे बहुत सुन्दरता और दृढ़ता के साथ समाहित किया है।

प्रिया के मन में पुरुष जाति के प्रति गहरी घृणा भर गई है। उसके बचपन से घटती चली आ रही अनेक पीड़ादायी घटनाएं उसे पुरुष–विरोधी बना देती हैं। चाहे विधवा की स्थिति हो या अवैध संतान की स्थिति, रखैल की स्थिति हो या बलात्कारों की पीड़िता होना; स्त्री को पुरुष के द्वारा सदैव सताया गया पाया। इसलिए उसके मन में आक्रोश और विद्रोह इतना तीव्र हो जाता है कि वह प्रेम को धोखा मानने लगती है। यह पुरुष के प्रति घृणा की पराकाष्ठा है–''मुझे प्रेम, सेक्स, विवाह, ये सारे सदियों पुराने घिसे हुए शब्द लगने लगे थे। नहीं, शब्द नहीं, मांस के ताज़ा टुकड़े, लहू टपकाते हुए। इन शब्दों के पीछे की दीवानगी और आदिकाल से चली आ रही परंपराओं का चेहरा सिर्फ औरत के आंसुओं से तरबतर है।'' [14]

स्त्री के दमन का एक आयाम है–उसके अधिकारों का हनन पुरुषप्रधान समाज सबसे पहले उसकी देह पर अपना कब्जा जमाता है और अपनी देह पर अपने ही अधिकार से उसे बेदखल करता है।

प्रभा खेतान ने स्त्री के दमन के समाजशास्त्र में उसके निमंत्रक घटकों का बड़ी बेबाकी के साथ उद्घाटन किया है। स्त्री के शारीरिक व मानसिक दमन की अनेक घटनाएं 'छिन्नमस्ता' के कथानक का हिस्सा है। स्त्री दमन के इस समाजशास्त्र में कानून और अन्य ज्ञानानुशासन भी अपनी प्रकृति में पितृसत्तात्मकता के ही पक्षधर हैं, क्योंकि वे अधिकांश में पुरुष–द्वारा निर्मित और लिखित हैं।

इस दमन ने, नियंत्रण के घटकों ने, यातना की मन पर जमी पर्तों ने प्रिया को न केवल पुरुष–विरोधी बना दिया, अपितु पुरुष के खिलाफ उसे नैतिक, सामाजिक, आर्थिक सभी मोर्चों पर लाकर खड़ा कर दिया है। अगर बचा है तो केवल राजनैतिक मोर्चा, वह उपन्यास के ढांचे में फिट नहीं होता था। हां, उसका बहुत छोटा–सा स्पर्श है, संकेत है।

रेखा कस्तवार के अनुसार–''स्त्री की चेतना जहां विकसित होने लगती है, स्त्री की महत्त्वाकाक्षाएं अस्वीकार्य होने लगती हैं। यदि स्त्री अपने व्यवसाय में व्यस्त है, घर में समय नहीं दे पा रही, पति की दैहिक, जरूरतों को पूरा नहीं कर पा रही, तब बिजनेस का औचित्य परिवार नहीं समझता। अच्छी स्त्री की परंपरागत भूमिका से भिन्न छवि न परिवार को स्वीकार्य है, न ही समाज को। अपने लिए जगह बनाती स्त्री से व्यवस्था को भी खतरा है। इस 'घरफोड़' स्त्री से परिवार को बचाकर रखना चाहता है समाज।'' [15]

स्त्री हर चीज़ से समझौता कर लेती है, लेकिन संतान का विछोह उसे सबसे अधिक तोड़ता है। प्रिया प्रसिद्ध अग्रवाल खानदान की बहू होने से मिले स्टेटस तथा नरेन्द्र की पत्नी होने के नाते मिली सामाजिक सुरक्षा को ठुकरा कर नरेन्द्र से अलग रहने का निर्णय करती है। घर टूट जाने का दुख उसे अब नहीं सालता–''जिस तरह हर सम्पत्ति साम्राज्य लूट, ठगी और अपराध की बुनियाद पर टिका होता है, ठीक उसी तरह हर परिवार का ताना बाना स्त्री की गुलामी और अस्मिता विहीनता की बुनियाद पर खड़ा है–चाहे वह मध्ययुगीन पितृ सत्तात्मक ढांचेवाला सामंती संयुक्त परिवार हो या पूंजीवादी ढंग से संगठित परिवार। परिवार–वर्ग–निरपेक्ष संस्था नहीं। परिवार का मूल्य–मुक्त प्यार होता ही नहीं। पूर्ण समानता और स्वतंत्र अस्मिता की चाहत वाली स्त्री भला क्यों चाहेगी कि बचा रहे परिवार?'' [16]

प्रिया के घर त्यागने के बाद उसके दुख सुख के दो ही साथी हैं–उसके ससुर की दूसरी पत्नी तिलोत्तमा और उसकी बेटी नीना छोटी मां (तिलोत्तमा) उसे मां की सी ममता देती है तो नीना से उसे बहन का सा प्यार मिलता है। नरेन्द्र व उसकी मां, तिलोत्तमा व नीना से नफ़रत करते हैं। प्रिया संजू (बेटे) की शादी पर जाने से सिर्फ इसलिए इंकार कर देती है, क्योंकि उस समारोह में तिलोत्तमा व नीना को नहीं बुलाया गया। प्रिया संबंधों की परिधि, उनके सुख–दुख के बंधन से मुक्त हो चुकी है, संबंधों के शाश्वत सच अब उसे कमज़ोर नहीं होने देते। अकेले होने पर भी उसे किसी अन्य पुरुष पर निर्भर होने की कतई इच्छा नहीं है। वह अपने मित्र फ़िलिप से कहती है–''मेरा काम, जिसमें मुझे सृजन और अभिव्यक्ति का सुख मिलता है। मेरा सबसे बड़ा आलंबन है। यही वह एक बालिश्त ज़मीन है जिसमें मैंने कभी एक मुट्ठी भर बीज रोपे थे। यह पौधा छोटा ही सही, पर इसे मैंने सींचा है। और मेरे सामने नीना है, मेरी अगली पीढ़ी मुझसे ज्यादा सशस्त, ज्यादा ईमानदार, मैं चाहती हूँ कि इस अब नीना इस काम को संभाले।'' [17]

प्रिया अपने बेटे की शादी में सम्मिलित नहीं होती तथा इसके विपरीत समाज की दृष्टि में अवैध सन्तान समझी जाने वाली नीना के प्रति ममता न्यौछावर करती है। संजू की शादी का बहिष्कार उसकी सिद्धांतवादिता से जुड़ा है। यह नारी के प्रति अत्याचार के विरोध की परिणति हैं, क्योंकि उसमें उसकी रखैल सास व उसकी बेटी के सम्मिलित होने की मनाही थी। दृढ़ता से उठाया गया यह कदम प्रिया की उस स्त्रीवादी दृष्टि का परिचायक है, जो भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए बेहद जरूरी है। 'छिन्नमस्ता' में सामाजिक विशेषतः पारिवारिक परिवर्तन और उसके नियंत्रण के पारस्परिक संघर्ष को उपन्यास का कलेवर दिया गया है। यह भारतीय समाज के बदलते रूप को उद्घाटित करता है, जो विघटन का समाजशास्त्र है। यहाँ जीवन की स्वीकृति पद्धतियों 'नॉर्मज' में आए बदलाव तथा विभिन्न सामाजिक संस्थाओं व उनके अंगों की परस्पर संबद्धता समाप्त होती दिखाई देती है। विशेषतः 'छिन्नमस्ता' में विवाह और परिवार की संस्था का ध्वंसात्मक चित्रण है जो पति–पत्नी, माता–पिता व संतान, भाई–बहन तथा नई व पुरानी पीढ़ी के मध्य चित्रित तनाव के माध्यम से प्रकट हुआ है। ऐसे में प्रेम, सौहार्द, सहयोग और त्याग जैसे मूल्यों का क्षरण स्वाभाविक है।

प्रभा खेतान में 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में प्रिया का चरित्र घटनाओं के घात–प्रतिघात में कुशलता से विकसित किया है। उसके चरित्र के विकास का आरम्भिक छोर उसका जन्म और उसके जन्म पर उसके परिवार में छा जानेवाला दुःख वैराग्य का वातावरण है, जो समाज में स्त्री की दोयम स्थिति का घोतक है। उसके चरित्र के विकास का मध्यभाग घटनाओं को विस्तार देता है और स्त्री–विषयक यंत्रणा अनेक चरित्रों के माध्यम से प्रकट होने लगती है। यहाँ प्रिया अपनी स्थिति को बदलने के लिए संकल्प से भर उठती है क्यों कि पीड़ा से चिपके रहने पर अन्त भी पीड़ा में ही होता है, पीड़ा से निजात में नहीं। इस संकल्प का आधार बनता है–साहस और मुक्ति की तकनीक बनती है–समाज के बने बनाए व्यवहार के प्रतिमानों से विचलन प्रगति का रास्ता प्रतिमानों से विचलित हुए बिना नहीं खुल सकता। प्रिया के चरित्र के विकास का अन्तिम हिस्सा है सत्य के अन्दर घुसकर सत्य का साक्षात्कार करना और आचरण से सत्य की परिभाषा गढ़ना।

स्त्री होना कोई अपराध नहीं है, पर नारीत्व की आंसू भरी नियति स्वीकारना बहुत बड़ा अपराध है। इसी गुरुमंत्र को उसने जूडी के सामने दोहराया था–''सुनो, जिंदगी फिर से शुरू करने के लिए, ज़िंदा रहने के लिए असीम साहस और धैर्य की जरूरत है।'' [18]

प्रिया इस गुरुमंत्र को अपनी मानसिकता बना लेती है–''औरत हर तरह मरती है, लेकिन रोती हुई औरत मुझे अच्छी नहीं लगती।

मुझे औरत की इस, निष्क्रियता पर झुंझलाहट होती है। यह क्या घुट–घुट कर मरना?''[19] स्त्री, और के रूप को नकार कर जिस मुक्ति स्थल पर पहुंचती है, वह प्रिया के शब्दों में सब प्रकार के स्वातंत्र्य का अनुभव है, एक सम्पूर्ण निर्बंधता है, अपने मनोराज्य का निरापद स्वामित्व है–''लगता है मैंने अभी–अभी जीना सीखा है। धरती पर मेरी ज़रूरत के मुताबिक धूप है, हवा है, पानी है। मेरी अपनी एक गति है और उस गति से दौड़ रही हूँ।''[20]

लेकिन, प्रिया अकेली है और अकेलापन महसूस कर रही है। क्या यह पूरी तरह काम्य स्थिति है? जो प्रिया पुरुष को पूरी तरह अनावश्यक मान रही है, वही प्रिया देहधर्म से पुरुष की आवश्यकता भी महसूस कर रही है। उपन्यास–लेखिका ने स्त्रीवादी वृत्त में, स्त्री को समानाधिकार देनेवाली मनोभूमि पर पुरुष की आवश्यकता को स्वीकृति दी है, नरेन्द्र वाली पुरुष का एकाधिकार और वर्चस्वी बनाने वाली पितृसत्तात्मक भूमि पर नहीं प्रभा खेतान इस तथ्य से बाखबर है कि स्त्री हो या पुरुष, उसकी अकेली जीवन यात्रा यूटोपिया ही साबित होगी। काम की जन्मजात मूलप्रवृत्ति और प्रजनन की आवश्यकता अनिवार्यतः पुरुष और स्त्री की पारस्परिक पूरकता को ज़ाहिर करती है–''पुरुष भूमि है, आकाश है, हवा है, अग्नि है, जल है, लेकिन स्त्री बीज बनकर धरती के नीचे दबना जानती है, वक्त आने पर अंकुरित होती है और फिर शाखा–प्रशाखाओं में फैलती हुई पूरा जंगल हो जाती है।...हर व्यक्ति अपने आप में इकाई अवश्य होता है, पर उसमें सच्चे और स्त्री और पुरुष वही हो पाते है, जो पुरुषधान समाज की सीमाओं को पार करके अपने स्वभाव में स्त्री की करुणा को संचित कर पाते हैं, वे ही जीवन का सच्चा सृजन कर पाते हैं।'' [21]

यह उपन्यास जहां समाप्त होता है, वहां प्रिया अधेड़ावस्था में है, इसलिए वह कह सकती है कि उसके जीवन में अब पुरुष की कोई भूमिका शेष नहीं है। लेकिन, उसकी अभिव्यक्तियों की गवाही यही है कि उसका विरोध नरेन्द्र से है, उसके पिता से है, उसकी अपनी मां से है, बड़े भाई से है, नौकर से है, समीर से है यानी उन सबसे है, जो स्त्री को विवशता देते हैं या उसकी विवशता का फायदा उठाते हैं। उसका विरोध डॉ. चैटर्जी से नहीं है, फ़िलिप से नहीं है, नीना से नहीं है, नीना की मां तिलोत्तमा से नहीं है। वह उन सबकी प्रशंसिका है। उनके प्रति या तो सदय और संवेदनशील है या आदर में नतमस्तक उसका विरोध उस पुरुषवादिता से है, जो स्त्री को गौण स्तर पर रखता है और पुरुष को प्रधानता देता है।

वस्तुतः प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता' उपन्यास स्त्री हृदय की पीड़ा, वेदना व उसके यातना व संघर्षपूर्ण जीवन तथा विद्रोह का हृदयस्पर्शी दस्तावेज़ है। उपन्यास लेखिका के शब्दों में–''औरत के जीवन में जरा सा खुरचो दर्द, पीड़ा और त्रासदी के बहते दरिया मिलेंगे।'' [22]

प्रिया का जीवन घोर यातना, पीड़ा एवं संघर्ष परिपूर्ण है। उसकी जीवन परिस्थितियां कुछ ऐसी है कि उसे बचपन से उपेक्षा, अपमान, शारीरिक व मानसिक उत्पीड़न झेलना पड़ता है। विशेषकर उसका बड़ा भाई उसे बचपन से युवा होने तक डरा धमका कर उसे अपनी हवस का शिकार बनाता है। विवाह के पश्चात उसे अपने पति नरेन्द्र का पशुवत व्यवहार झेलना पड़ता है। नरेन्द्र का कठोर व्यवहार, शारीरिक भोग की प्रवृत्ति, ईर्ष्या भाव तथा प्रिया का व्यवसाय नष्ट करने की मंशा प्रिया को विद्रोहिणी बनने के लिए विवश कर देती है। प्रिया भी पुरुष प्रधानता के खिलाफ तथा अपने सम्पूर्ण अस्तित्व की पहचान के लिए विद्रोह करती है और पुरुषों के दमनचक्र को मिटाकर ही दम लेती है।

अपनी देह से लेकर व्यापार तक पर प्रिया की अधिकार स्थापना स्त्रीवादी दृष्टि की उपस्थिति और परिणति है। इस दृष्टि से 'छिन्नमस्ता' उपन्यास अपनी चरित्र–सृष्टि और प्रतिपाद्य की दृष्टि से बेहद कलात्मक और महत्त्वपूर्ण है। स्त्रीवादी चिंतन ने स्त्री की मुक्ति को जिस विराटता से देखा और कल्पित किया, उसमें सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक अधिकारों की उसी रूप में प्राप्ति वांछित है, जो पुरुषों से बराबरी का दर्जा दिला सकते हों। इस उपन्यास में प्रायः सभी नारी पात्र या तो दमित हैं, शोषित हैं, या फिर वंचित हैं। इनमें से कुछ स्त्रीपात्र दमन और शोषण की जंज़ीरों को तोड़ते हैं और विद्रोही मुद्रा धारण करते हैं। प्रिया उनमें सबसे अधिक तेजस्वी पात्र है। कुछ अन्य स्त्री पात्र रूढ़ियों को तोड़ते हैं, जब कि अनेक स्त्रीपात्र साहस के अभाव को भी प्रकट करते हैं। लेकिन, सम्पूर्णता में यह उपन्यास स्त्री के दमन और विद्रोह की जो स्त्री–भंगिमा इस उपन्यास में निरूपित हुई है, वह भारतीय समाज की व्यापक यथार्थता है। इसलिए यह उपन्यास भारतीय समाज की रूढ़िवद्धता, स्त्रियों के साथ दुराचार, स्त्रियों के अपमान और दमन तथा स्त्रियों के बढ़ते हुए आर्थिक स्वावलम्बन का जीता–जागता चित्र बड़ी कलात्मकता के साथ प्रस्तुत करता है। स्त्री जागरण की दृष्टि से यह कृति पाठकीय संवेदना में बड़ी गहराई और सहजता से उतर जाती है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1997, पृ. 144.
2. वही, पृ. 221.
3. वही, पृ. 17.
4. वही, पृ. 23.
5. स्त्री मुक्ति का सपना, (सं.) प्रो. कमला प्रसाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2005, पृ. 31.
6. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1997, पृ. 46.
7. रेखा कस्तवार, स्त्री चिंतन की चुनौतियां, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2006, पृ. 179.
8. अरविंद जैन, औरत, अस्तित्व और अस्मिता, सारांश प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2000, पृ. 56.
9. राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2001, पृ. 230.
10. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1997, पृ. 29.
11. वही, पृ. 91.
12. वही, पृ. 85.
13. वही, पृ. 215.
14. वही, पृ. 216.
15. रेखा कस्तवार, स्त्री चिंतन की चुनौतियां, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2006, पृ. 181.
16. कात्यायनी, 'क्यों बचा रहे यह परिवार' (लेख) स्त्री, परंपरा और आधुनिकता, (स) राजकिशोर, वाणी प्रकाशन, सन् 1999, पृ. 143.
17. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1997, पृ. 212.
18. वही, पृ. 186.
19. वही, पृ. 187.
20. वही, पृ. 188.
21. वही, पृ. 207.
22. वही, पृ. 211.